International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 6; November 2017; Page No. 09-11

महादेवी जी के गद्य साहित्य में भाव–संवेदना के विविध पक्ष

भावना पाण्डेय
शोधार्थी, हिन्दी भाशा विज्ञान विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

महादेवी जी की भाव–सृष्टि उनके समस्त साहित्य में विशेषतौर गद्य साहित्य के अंतर्गत रेखाचित्रों, संस्मरणों, यात्रावृत्तों, निबंधों आदि में उभयनिष्ठ होकर सामने आयी है। महादेवी जी की अनुभूति प्रणयिनी की अनुभूति न होकर मातृत्व के वात्सल्य से भी संपृक्त है उसमें बहिन का निश्छल प्रेम है तो नारीत्व की सशक्त अभिव्यक्ति भी।जन जीवन में फैले दुःख, दीनता, अत्याचार आदि के प्रति व्यापक सहानुभूति, करुणा और ममता है तो अपने चरम पर पहुँचने के बाद विद्रोह बनकर भी उभरने वाली शक्ति का परोक्ष रूप भी। यही कारण है कि उनके संस्मरण एवं रेखाचित्रों के अधिकांश पात्रों एवं विषयों का चित्रण जीवन को छूने वाला बन पड़ा है। महादेवी जी मानव के समकक्ष ही मानवेत्तर प्राणियों के प्रति भी अत्यंत संवेदनशील हैं यहाँ तक कि उनका रचनात्मक साहित्य भी उनके तीव्र संवेदन और भावों की सजगता का साक्ष्य बनकर उपस्थित होता है।

उपलब्ध साहित्य

महादेवी रचनावली के विभिन्न भाग, पथ के साथी, मेरा परिवार, श्रंखला की कड़ियाँ, विभिन्न शोधग्रंथ एवं इन्टरनेट से प्राप्त अन्य द्वितीयक एवं तृतीयक स्त्रोत।

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोधपत्र लेखन हेतु विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

विमर्श

महादेवी जी के रचनात्मक गद्य ही नहीं विचारात्मक गद्य भी उनकी भावसंपदा के आलोक में ही लिखा गया है फिर चाहे वह उनके 'क्षणदा' के निबंध हों या 'साहित्कार की आस्था' या 'संकल्पिता' में संकलित निबंध या अन्य निबंध ही हों। भाव और उससे जनित अनुभूति को लक्ष्य करके महादेवी जी स्वयं लिखती हैं कि ''अनुभूति की तीव्रता ही हमारे मनोजगत् में कोई संस्कार छोड़ जाती है और यह तीव्रता अनुभूत विषय के महत्वपूर्ण या तुच्छ होने पर निर्भर नहीं रहती। बालक के लिए खिलौना टूटने की दुःखद अनुभूति भी इतनी तीव्र और सत्य हो सकती है, जितनी व्यस्क की आत्मीय जन के बिछोह की न हो।''[1] वे मानती हैं कि ''जब हमारी भाव प्रवणता गंभीर और प्रशांत होती है, तब अतीत की रेखाएँ कुहरे में से स्पष्ट होती हुई वस्तुओं के समान अनायास ही स्पष्ट से स्पष्टतर होने लगती हैं; पर जिस समय हम तर्क से उनकी उपयोगिता सिद्ध करके स्मरण करने बैठते हैं, उस समय पत्थर फेंकने से हटकर मिल जाने वाली, पानी की काई के समान विस्मृति उन्हें फिर–फिर ढक लेती हैं।''[2] 'अतीत के चलचित्र' में वे लछमा के बारे में बताते हुए लिखती हैं कि ''धूप से झुलसा हुआ मुख ऐसा जान पड़ता है, जैसे किसी ने कच्चे सेब को आग की आँच पर पका लिया हो। सूखी–सूखी पलकों में तरल–तरल आँखें ऐसी लगती हैं, मानो नीचे आँसुओं के अथाह जल में तैर रही हों और ऊपर हँसी की धूप से सूख गई हो।.....''रात–दिन कठिन पत्थरों पर दौड़ते–दौड़ते, घास काटते–काटते और लकड़ी तोड़ते–तोड़ते हाथों में जो कठिनता आ गई है, उसे मिट्टी और गोबर की आर्द्रता ही कुछ कोमल कर देती है।''[3]

उनके निबंध 'यथार्थ और आदर्श' में नारी के त्याग और करुणा के बदले उसे दिए जाने वाले तुच्छ एवं कुत्सित प्रतिदान को लक्ष्य करके वे लिखती हैं कि ''जो नारी, माता, भगिनी, पत्नी, पुत्री आदि के अनेक संबंधों से, वात्सल्य, ममता, स्नेह आदि असंख्य भावनाओं से तथा कोमल–कठोर साधनाओं की विविधता से, पुरुष को, भूमिष्ठ होने से चितारोहण तक घेरे रहती है और मृत्यु के उपरांत भी उसे स्मृति में जीवित रखने के लिए उग्रतम तपस्या से नहीं हिचकती, उससे सत्य यथार्थ और उनसे सजीव आदर्श पुरुष को कहाँ मिलेगा? उससे पुरुष की वासना का वह संबंध भी है जो पशु–जगत् के लिए भी सामान्य है। परंतु मानवी ने पशु–जगत् की साधारण प्रवृत्ति से बहुत ऊपर उठकर ही पुरुष को आज्ञाकारी पुत्र, आज्ञाकारी पिता, विश्वासी भाई और स्नेही पति के समान रूपों में प्रतिष्ठित किया है।

महादेवी जी बौद्ध दर्शन से भी अत्यधिक प्रभावित थीं। बुद्ध की करुणा, ममता और सहानुभूति के साथ उनके मातृत्व की विराटता भी महादेवी में पूर्णतः घर कर चुकी थी जिसके कारण वे घृणा से अधिक प्रेम एवं विद्रोह से अधिक मध्यम मार्ग को वरीयता देती थीं इन बातों का प्रभाव उनके रेखाचित्रों पर भी देखा जा सकता है। नारी के प्रति होते अत्याचार महादेवी जी को व्याकुल कर देते हैं। उदाहरण के लिए लछमा के रेखाचित्र में वे लिखती हैं कि एक पुरुष के प्रति अन्याय की कल्पना से ही हमारा सारा पुरुष–समाज उस स्त्री से प्रतिशोध लेने को उतारू हो जाता है। वे समाज की दोहरी नीति की सदा ही विरोधी रही हैं और उसमें स्वयं स्त्री की सहभागिता का भी वे विरोध करती हैं वे लिखती हैं कि एक स्त्री के साथ क्रूरतम् अन्याय का प्रमाण पाकर भी सब स्त्रियाँ उसके अकारण दण्ड को अधिक भारी बनाए बिना नहीं रहतीं। महादेवी जी स्त्री को पुरुष की अनुगामिनी के रूप में नहीं बल्कि एक स्वतंत्र व्यक्तित्व की स्वामिनी बनने की समर्थक रही हैं। जिसका पता उनके रेखाचित्रों में स्त्री के प्रति उनके विचारों के माध्यम से चलता है।

'स्मृति की रेखाएँ' में भक्तिन, चीनी फेरी वाला, दो पर्वत पुत्र, मुन्नु की माँ, ठकुरी बाबा, बिबिया और गुँगिया आदि का जिस आत्मीयता के साथ महादेवी जी ने चित्रण किया है उसके पीछे महादेवी जी का यह विचार ही पल्लवित होता है जिसके बारे में वे स्वयं लिखती हैं कि ''स्मृति–यात्रा के इन सभी संगियों को जोड़ने वाला सूत्र वह हार्दिक स्नेह है जो महादेवी की असामान्य कोटि की भाव प्रवणता

और संवेदनशीलता के कारण अक्षत रहा और साहित्य के कालजयी पृष्ठों पर उजागर हुआ। उसकी स्निग्धता के कारण ही ये पात्र आज भी जीवित से लगते हैं। समाज के इन उपेक्षित व्यक्तियों को, जाहिर है, उनकी करुणा, सहानुभूति और सहायता का अतिरिक्त अंश प्राप्त हुआ। इनमें युगों के सामाजिक अन्याय और प्रताड़ना के प्रहार झेलने वाली स्त्रियाँ ही नहीं, विपन्न, पराश्रित वृद्ध पुरुष और असमय अनाथ हो जाने वाले बालक भी हैं।''[4]

उनके संस्मरणों में भी लेखन क्षेत्र से जुड़े कई लोगों के प्रति उनकी तीव्र संवेदना और अपनत्व की भावना का परिचय मिलता है। 'पथ के साथी' में जयशंकर प्रसाद और निराला के प्रति उनकी संवेदनात्मक दृष्टि तो सर्वविदित है ही रवीन्द्रनाथ टैगोर, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्रा कुमारी चौहान, सुमित्रानंदन पंत, सियारामशरण गुप्त आदि के प्रति उनके मन में जो समत्व था वह उनके संस्मरणों के प्रत्येक अंश से मधुमिश्रित वाक्यों रूप में टपकता है। वे निराला जी के संस्मरण में उनके प्रति अति आत्मीय भ्रातृत्व प्रेम को लेकर लिखती हैं कि ''मेरा प्रयास किसी भी जीवंत बवंडर को कच्चे सूत में बाँधने जैसा था या किसी उच्छल महानद को मोम के तटों में सीमित करने के समान, यह सोचने–विचारने का तब अवकाश नहीं था। पर आनेवाले वर्ष निराला जी के संघर्ष के ही नहीं मेरी परीक्षा के भी रहे हैं। मैं किस सीमा तक सफल हो सकी हूँ यह तो मुझे ज्ञात नहीं, पर लौकिक दृष्टि से निःस्व निराला हृदय की निधियों में सबसे समृद्ध भाई हैं, यह स्वीकार करने में मुझे दुविधा नहीं। उन्होंने अपने सहज विश्वास से मेरे कच्चे सूत के बंधन को जो दृढ़ता और दीप्ति कदी है वह अन्यत्र दुर्लभ रहेगी। दिन–रात के पगों से वर्षों की सीमा पार करने वाले अतीत ने आग के अक्षरों में आँसू के रंग भर–भरकर ऐसी अनेक चित्र–कथाएँ आँक डाली हैं, जितनी इस महान कवि और असाधारण मानव के जीवन की मार्मिक झाँकी मिल सकती है। पर उन सबको सँभाल सके ऐसा एक चित्राधार पा लेना सहज नहीं।''[5]

सुभद्राकुमारी चौहान जी के संस्मरण में अपनी प्रथम घटना का उल्लेख करने हुए सुभद्रा जी का उनपर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा वे लिखती हैं कि ''बहिन सुभद्रा का चित्र बनाना कुछ सहज नहीं है क्योंकि चित्र की साधारण जान पड़ने वाली प्रत्येक रेखा के लिए उनकी भावना की दीप्ति 'संचारिणी दीपशिखेव' बनकर उसे असाधारण कर देती है। एक–एक करके देखने से कुछ भी विशेष नहीं कहा जायेगा, पंरतु सबकी समग्रता में जो उद्भासित होता था, उसे दृष्टि से अधिक हृदय ग्रहण करता था।''[6] सुभद्रा जी के जीवन में रौद्र–करुणा खोज निकालतकर महादेवी जी उनके बारे में बताती हैं कि सुभद्रा जी मानव मात्र के हित के लिए किसी भी त्याग के लिए सदैव तत्पर रहती थीं और दूसरी और प्रतिकारक समस्त बंधनों को अस्वीकार करने से भी नहीं चूकतीं। सुभद्रा के हृदय में महादेवी जी के लिए जो सहज प्रेम और वात्सल्य था महादेवी जी सुभद्रा जी के बारे में कहती हैं कि ''सातवीं और पाँचवीं कथा की विद्यार्थिनियों के सख्य को सुभद्राजी के सरल स्नेह ने ऐसी अमिट लक्ष्मण–रेखा से घेरकर सुरक्षित रखा कि समय उस पर कोई रेखा नहीं खींच सका। अपने भाई–बहिनों में सबसे बड़ी होने के कारण में अनायास ही सबकी देखरेख और चिंता की अधिकारिणी बन गयी थी। पविार में जो मुझसे बड़े थे उन्होंने भी मुझे ब्रह्मसूत की मोटी पोथी में आँख गड़ाये देखकर अपनी चिंता की परिधि से बाहर समझ लिया था। पर केवल सुभद्रा पर न मेरी पोथियों का प्रभाव पड़ा, न मेरी न मेरी समझदारी का.....बँगले में आकर देखती कि सुभद्रा जी रसोई घर में या बरामदे में भानमती का पिटारा खोले बैठी हैं और उसमें से अद्भुत वस्तुएँ निकल रही हैं। छोटी–छोटी पत्थर या शीशे की प्यालियाँ, मिर्च का अचार, बासी पूरी, पेड़े, रंगीन चकला–बेलन, चुटीली, नीली–सुनहली चूड़ियाँ आदि–आदि सबकुछ मेरे लिए आया है, इस पर कौन विश्वास करेगा! पर वह आत्मीय उपहार मेरे निमित्त ही आता था।.....वे अपने थैले से दो चमकीली चूड़ियाँ निकालकर हँसती हुई पूछतीं– पसंद हैं, मैंने दो तुम्हारे लिए, दो अपने लिए खरीदी थीं। तुम पहनने में तोड़ डालोगी। लाओ अपना हाथ, मैं पहना देती हूँ? पहन लेने पर वे बच्चों के समान प्रसन्न हो उठतीं।''[7]

महादेवी जी का 'मेरा परिवार' उनकी मानव के प्रति ही नहीं बल्कि प्राणीमात्र के लिए उनके मन की अपनत्व की भावना का साक्ष्य प्रस्तुत करता है। उसमें जितने भी मानवेतर प्राणी हैं सबके साथ महादेवी जी का प्रेम उसी प्रकार था जिस प्रकार कृष्ण का धेनु या अपनी बाँसुरी के प्रति था। वे स्वयं स्वीकार करती हैं कि ये उनके परिवार के सदस्य थे। 'मेरा परिवार' के अंतर्गत नीलकंठ मोर, गिल्लू गिलहरी, सोना हिरणी, दुर्मुख खरगोश, गौरा गाय, नीलू कुत्ता, रोजी, निक्की, रानी आदि के भावपूर्ण संस्मरण लिखे हैं। वे 'गिल्लू' और स्वयं के बीच के प्रेम–रसायन के कुछ अंश पाठकों के साथ साझा करते हुए लिखती हैं कि ''मेरे पास बहुत–से पशु–पक्षी हैं और उनका मुझसे लगाव भी कम नहीं है, परंतु उनमें से किसी को मेरे साथ मेरी थाली में खाने की हिम्मत हुई है, ऐसा मुझे स्मरण नहीं आता। गिल्लू इनमें अपवाद था। मैं जैसे ही खाने के कमरे में पहुँचती, वह खिड़की से निकलकर मेरे आँगन की दीवार, बरामदा पार करके मेज पर पहुँच जाता और मेरी थाली में बैठ जाना चाहता। बड़ी कठिनाई से मैंने उसे थाली के पास बैठना सिखाया, जहाँ बैठकर वह मेरी थाली में से एक–एक चावल उठाकर बड़ी सफाई से खाता रहता। काजू उसका प्रिय भोजन था और कई दिन काजू न मिलने पर वह अन्य खाने की चीजें या तो लेना बंद कर देता था या झूले के नीचे फेंक देता था।''[8]

इसी से निर्माण–युग का शूर भी, प्रकृति के समान ही अनेक–रूपिणी मातृजाति के वरदानों के सामने नतमस्तक हो सका और उसका कृतज्ञ हृदय भौतिक एश्वर्य से लेकर दिव्य ज्ञान तक का नामकरण करते समय नारीमूर्ति का स्मरण करता रहा। जब पुरुष ने, सौंदर्य और शक्ति के इसी यथार्थ को विकलांग और जीवन के इसी आदर्श को खंडित बना, उसे अपने मदिरा के पात्र में नाप लेने का स्वाँग करते हुए आश्वस्त भाव से कहा– बस नारी तो इतनी ही है, तब उसने अपनी बुद्धि की पंगुता और हृदय की जड़ता की ही घोषणा की। क्रमशः हमारे सामगान का वंशज गीत, हमारी अर्चना में उत्पन्न नृत्य सब उस समाज–विशेष की पैतृक संपत्ति बन गए, जिस केवल वासना की पूँजी से व्यापार करने का क्रूर कर्तव्य स्वीकार करना पड़ा।''[9] वे लिखती हैं कि ''पिता के इंगित मात्र से अपने जीवन–प्रभात में देखे रंगीन स्वप्नों को विस्मृति से ढक कर बिना एक दीर्घ निश्वास लिए अयोग्य से अयोग्य पुरुष का अनुगमन करने की प्रस्तुत पुत्री को देखकर किसका हृदय न भर आयेगा? पिता की अट्टालिका और वैभव से वंचित दरिद्र भगिनी ऐश्वर्य का उपयोग करे वाले भाई की कलाई पर सरल भाव से रक्षाबंधन बाँधते देख कौन विश्वास कर सकेगा कि ईर्ष्या भी मनुष्य का स्वाभाविक विकास है और अनेक साहसहीन निर्जीव पुत्रों द्वारा उपेक्षा और अनादर से आहत हृदय से उनके सुख के प्रयत्न में लगी हुई माता को देख कौन 'क्वचित् कुमाता न भवति' कहने वाले को स्त्री–स्वभाव के गंभीर रहस्य का अन्वेषक न मान लेगा?''[10]

उपसंहार

महादेवी जी के विचारात्मक गद्य का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि उन्होंने अपनी भावभूमि की उर्वरता के आधार पर ही विषयों

का चयन भी किया है और उनका पल्लवन भी। इसमें उनके नारी विषयक सभी निबंधों सहित अन्य समस्त रचनात्मक गद्य में उन्होंने नारी की संवेदना और उसकी कोमल भावना के प्रति समाज के दोहरे आचरण के प्रति प्रगतिवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए नारी को स्त्री के बदले एक व्यक्ति के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया है। अस्तु महादेवी जी का रचनात्मक गद्य हो या विवेचनात्मक गद्य या विचारात्मक गद्य उनकी भाव की आधार भूमि पर उनकी संवेदनशीलता की कलम से लिखा गया है। लेखन के दौरान वे कभी–कभी अतिशय भावुक होकर कई बार आवेशमय और उत्तेजित भी हो जाती हैं जिसका पता उनके उद्धरणों और दृष्टांतों से सहज ही लगाया जा सकता है। चाहे उनके रेखाचित्रों में उनसे जुड़े हुए समाज के सताये सामान्य लोग हों या उनके वे प्राणी जो महादेवी जी के परिवार के सदस्य बन गये हों या उनके श्रद्धेय साहित्यकार जो 'पथ के साथी' में मिलते हैं या समाज में सतायी जाने वाली स्त्री जाति वे किसी के भी प्रति अनाचार या अत्याचार होते देख आहत हो उठती हैं। उनका मन आर्त पुकार कर उठता है।

संदर्भ

1. मेरा परिवार, आत्मिका, पृ.–9।
2. अतीत के चलचित्र, रामा, महादेवी साहित्य, भाग–2, संपादक– ओंकार शरद, प्रथम संस्करण–1970, सेतु प्रकाशन, झाँसी, मूल्य 30 रुपये, पृ.–20।
3. अतीत के चलचित्र, लछमा, महादेवी साहित्य, भाग–2, संपादक– ओंकार शरद, प्रथम संस्करण–1970, सेतु प्रकाशन, झाँसी, मूल्य 30 रुपये, पृ.–107–108।
4. महादेवी वर्मा, डॉ. उपेन्द्र, उत्तरप्रदेश हिन्छी संस्थान, लखनऊ, प्रथम संस्करण–2009, मूल्य–70, पृ.–80–81।
5. पथ के साथी, निराला भाई, महादेवी साहित्य, भाग–2, संपादक– ओंकार शरद, प्रथम संस्करण–1970, सेतु प्रकाशन, झाँसी, मूल्य 30 रुपये, पृ.–280।
6. पथ के साथी, सुभद्रा, महादेवी साहित्य, भाग–2, संपादक– ओंकार शरद, प्रथम संस्करण–1970, सेतु प्रकाशन, झाँसी, मूल्य 30 रुपये, पृ.–270।
7. पथ के साथी, सुभद्रा, महादेवी साहित्य, भाग–2, संपादक– ओंकार शरद, प्रथम संस्करण–1970, सेतु प्रकाशन, झाँसी, मूल्य 30 रुपये, पृ.–276–277।
8. मेरा परिवार, गिल्लू, महादेवी साहित्य, भाग–2, संपादक– ओंकार शरद, प्रथम संस्करण–1970, सेतु प्रकाशन, झाँसी, मूल्य 30 रुपये, पृ.–329–330।
9. यथार्थ और आदर्श, महादेवी साहित्य, भाग–1, संपादक– ओंकार शरद, प्रथम संस्करण–1969, सेतु प्रकाशन, झाँसी, मूल्य 30 रुपये, पृ.–294।
10. शृंखला की कड़ियाँ, महादेवी का गद्य, लेखक–डॉ. उपेन्द्र, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, प्रथम संस्करण–2009, मूल्य–70रुपये, पृ.–100 से अवतरित।